जैन अपभ्रंश कथा-साहित्य का मूल्यांकन

श्री मानमल कुदाल

मध्यकाल की साहित्यिक प्रवृत्तियों के उद्भव तथा भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति को खोजने की जिज्ञासा से अनेक विद्वानों ने अपभ्रंश साहित्य का गूढ़ अध्ययन किया है। इनमें प्रमुख रूप से श्री नाथूराम प्रेमी, डा० हीरालाल जैन, डा० हरिवंश कोछड़, डा० नामवर सिंह, डा० देवेन्द्रकुमार जैन, डा० देवेन्द्रकुमार शास्त्री, डा० ए० एन० उपाध्याय, डा० कस्तूरचन्द कासलीवाल, डा० हरिवल्लभ भायाणी डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

अपभ्रंश साहित्य का विकास ई० पूर्व ३०० से १८ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक होता रहा है।

अपभ्रंश भाषा में प्रचुर साहित्य की रचना हुई है। अपभ्रंश काव्य को मुख्य रूप से दो भागों में विभक्त किया गया है[1]—
१. प्रबन्ध काव्य, २. मुक्तक काव्य।

प्रबन्ध काव्य को तीन भागों में बांटा गया है—(१) महाकाव्य, (२) एकार्थ काव्य, और (3) खण्ड काव्य।

महाकाव्य को चार भागों में बांटा गया है—(क) पुराणकाव्य, (ख) चरितकाव्य, (ग) कथाकाव्य, और (घ) ऐतिहासिक काव्य।

कथाकाव्य को तीन भागों में बांटा गया है—(१) प्रेमाख्यान कथाकाव्य, (२) वृत्तमाहात्म्यमूलक कथाकाव्य, (३) उपदेशात्मक कथाकाव्य।

मुक्तक-काव्य को चार भागों में बाँटा गया है—(१) गीति-काव्य, (२) दोहा-काव्य, (३) चउपई-काव्य, (४) फुटकर काव्य (स्तोत्र-पूजा आदि)।

अपभ्रंश साहित्य प्रधान रूप से धार्मिक एवं आध्यात्मिक है। उसमें वीर और शृंगाररस की भी यथोचित अभिव्यक्ति हुई है। शान्तरस का जैसा निरूपण अपभ्रंश साहित्य में मिलता है, वैसा अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। विशेष रूप से जैन-मुनियों के साहित्य में शान्त रस का स्वानुभूत वर्णन मिलता है। अपभ्रंश में लौकिक रस का भी अच्छा निरूपण हुआ है।

यहां हमारा प्रतिपाद्य विषय अपभ्रंश के कथा-साहित्य का ही मूल्यांकन करना है। अतः संक्षेप में अपभ्रंश के कथा-काव्य पर ही प्रकाश डाला जाएगा।

काव्य की भाव-भूमि पर अपभ्रंश के कथा-काव्यों में लोक-कथाओं का साहित्यिक रूप में किन्हीं अभिप्रायों के साथ वर्णन किया गया लक्षित होता है। लोक-जीवन के विविध तत्त्व इन कथाकाव्यों में सहज ही अनुस्यूत हैं। क्या कथा, क्या भाव और क्या छन्द और शैली सभी लोकधर्मी जीवन के अंग जान पड़ते हैं। अतः कथा-काव्य का नायक आदर्श पुरुष ही नहीं, राजा, राजकुमार, वणिक, राजपूत आदि कोई भी साधारण पुरुष अपने पुरुषार्थ से अग्रसर हो अपने व्यक्तित्व तथा गुणों को प्रकट कर यशस्वी परिलक्षित होता है। एक उभरता हुआ व्यक्तित्व सामान्य रूप से सभी कथा-काव्यों में दिखाई पड़ता है। अपभ्रंश के इन कथा-काव्यों के अध्ययन से जहां सामाजिक यथार्थता का परिज्ञान होता है, वहीं धार्मिक वातावरण में तथा इतिहास के परिप्रेक्ष्य में जातीयता और परम्परा का भी बोध होता है।

अपभ्रंश के विशुद्ध प्रमुख कथा-काव्य निम्नलिखित हैं[2] :—

१. भविसयत्तकहा —(धनपाल)
२. जिनदत्तकथा —(लाखू)
३. विलासवती कथा — (सिद्ध साधारण)

१. डा० देवेन्द्रकुमार शास्त्री : "भविसयतकहा तथा अपभ्रंश कथा काव्य", पृ० ६१.
२. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : "अपभ्रंश भाषा और साहित्य की शोध प्रवृत्तियां", पृ० ३४.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४. श्रीपाल कथा —(रइधू)
५. सिद्धचक्र कथा —(नरसेन)
६. सप्तव्यसन वर्जन कथा—(पं० माणिक्यचन्द्र)
७. भविष्यदत्त कथा —(विबुध श्रीधर)
८. सुकुमाल चरित्र —(श्रीधर)
९. सनत्कुमार चरित्र —(हरिभद्र सूरि)
१०. श्रीपाल चरित्र —(दामोदर)
११. हरिषेण चरित्र। इत्यादि

अपभ्रंश का कथा-साहित्य प्राकृत की ही भाँति प्रचुर तथा समृद्ध है। अनेक छोटी-छोटी कथाएं व्रत-सम्बन्धी आख्यानों को लेकर या धार्मिक प्रभाव बनाने के लिए लोकाख्यानों के आधार पर रची गयी हैं। अकेली रविव्रत-कथा के संबंध में अलग-अलग विद्वानों की लगभग एक दर्जन रचनाएं मिलती हैं। केवल भट्टारक गुणभद्र रचित सत्रह कथाएं उपलब्ध हैं। इसी प्रकार पं० साधारण की आठ कथाएं तथा मुनि बालचन्द्र की तीन एवं मुनि विनयचन्द्र की तीन कथाएं मिलती हैं। अपभ्रंश कथा कोष के अन्तर्गत कई अज्ञात रचनाएं देखने को मिलती हैं। श्रीचन्द का कथा-कोष प्रसिद्ध ही है। इसके अतिरिक्त आगरा-स्थित दि० जैन-मन्दिर, धूलियागंज में, जयपुर तथा दिल्ली में भी अज्ञातनामा अपभ्रंश कथा-कोष मिलते हैं। यदि इन सबकी छानबीन की जाए तो लगभग एक सौ से भी अधिक स्वतन्त्र कथात्मक रचनाएं उपलब्ध होती हैं। इनके अतिरिक्त आचार्य नेमिचन्द्र सूरि विरचित 'आख्यानमणिकोष' में वर्णित तथा महेश्वर सूरि कृत 'संगममञ्जरी' की टीका में एवं मानसूरि कृत 'मनोरमा चरित्र' में भी अपभ्रंश की प्राकृत-अपभ्रंश मिश्रित कई कथाएं हैं। अभी तक इस समग्र कथा साहित्य का सर्वेक्षण तथा अनुशीलन नहीं किया गया है। भारतीय संस्कृति की अनुसन्धानात्मक दिशा में प्रवृत्त विद्वानों को इन कथाओं का अध्ययन भी करना चाहिए, जिससे मध्यकालीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के कतिपय नवीन तथ्य भी प्रकाशित हो सकेंगे।

अब हम अपभ्रंश के उपरोक्त कथा-काव्यों के माध्यम से साहित्य के विभिन्न सोपान—वस्तु-वर्णन, रस-सिद्धि, अंलकार-योजना, छन्द-योजना, प्रकृति-चित्रण आदि का वर्णन करते हुए साहित्य में वर्णित समाज और संस्कृति की दृष्टि से इसका मूल्यांकन करेंगे।

अपभ्रंश कथा-काव्यों का वस्तु-वर्णन—अपभ्रंश के कथा-काव्यों में वस्तु-वर्णन कई रूपों में मिलता है। कहीं परम्परायुक्त वस्तु-परिगणन, वृत्तात्मक शैली को अपनाया है, कहीं लोकप्रचलित शैली में भी जन-जीवन का स्वाभाविक चित्रण कर लोक-प्रवृत्ति का परिचय दिया है। परम्परागत वर्णनों में नगर-वर्णन, नखशिख-वर्णन, वन-वर्णन, प्रकृति-वर्णन दृष्टिगोचर होते हैं। कहीं-कहीं संश्लिष्ट योजना द्वारा सजीवता सहज रूप में प्रतिबिम्बित है। कई मार्मिक स्थलों की यथोचित संयोजना कथा-काव्य में रसात्मकता से ओत-प्रोत है। घटना-वर्णनों के बीच अनेक मार्मिक स्थलों की नियोजना स्वाभाविक रूप से हुई है।

कुछ कथा-काव्यों के उदाहरण दृष्टव्य हैं—

भविसयत्तकहा में युद्ध-वर्णन

कवि धनपाल ने भविसयत्तकहा में युद्ध-वर्णन अत्यन्त विस्तार से किया है। घनघोर युद्ध का सजीव वर्णन नीचे की पंक्तियों में अत्यन्त सजल है—

'हरिखरखुरणखोणी खणंतु गयपायपहारि घरदरमलंतु।
हणु रारि रारि करयलु करालु सण्णद्धबद्ध भडथडवमालु।
तं णिइवि सघण अहिमुहु चलंतु धाइउ कुरनसाहणु पडिखलंतु। (भ. क. १४, १३)

विलासवती कथा में संग्राम की स्थिति में दोनों (हंस और हंसी) विरह के वेग से करुण स्वर में कूकते हैं। उनका खाना-पीना छूट जाता है और चिन्ता से विकल होकर मृत्यु का आलिंगन करने के लिए तत्पर हो जाते हैं—

'ता गरुय विरह वेयण वसेण, कूवंति दोवि करुणइ सरेण।
आहारन न इच्छाहिं मरणहं वंछाहि खणु अच्छाहिं चिंताविय इं। (११, १५)

जिनदत्ताख्यान में प्रकृति-वर्णन के अन्तर्गत रात्रि के वर्णन का एक दृश्य द्रष्टव्य है—

"णं णिसा णिसायरीहिं फुल्लसोह णं रईहिं।
गेहि गेहि दिज्जयंति दीव जे तमोह हंति।
ताव चंदिया समेउ चंद उग्गउ सतेउ।
लोयणाण ते असोहु भंजि घल्लिउ तमोहु।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाव-व्यञ्जना

भाव-व्यञ्जना की दृष्टि से मानवीय प्रेम की प्रतिष्ठा तथा लोकव्यापी सुख-दुःखमय घात-प्रतिघातों के बीच संयोग और वियोग की निवृत्ति एवं परमपद की प्राप्ति समान रूप से सभी कथा-काव्यों में वर्णित है। भविसयत्तकहा में यदि माता और पुत्र का अमित स्नेह आप्यायित है तो विलासवती कथा में नायक और नायिका के सच्चे एवं पवित्र प्रेम की उत्कृष्टता तथा श्रीपाल और सिद्धचक्रकथा में मनुष्य की भोग-लिप्सा और नारी के अवदान प्रेम की कथा वर्णित है। अतएव संयोग और वियोग की विभिन्न स्थितियों में मानसिक दशाओं का सहज चित्रण हुआ है। आत्मगर्हा, ग्लानि,पश्चात्ताप, विस्मय, उत्साह, क्रोध, भय आदि अनेक भावों का संचरण विभिन्न प्रसंगों में लक्षित होता है।

पति श्रीपाल के समुद्र में गिरा दिये जाने पर वियुक्त रत्नमंजूषा जहां पति के गुणों का स्मरण कर उनकी याद करती है, वहीं माता-पिता और अपने भाग्य को कोसती है। वह कहती है—"मेरे पिता ने निमित ज्ञानी के कहने से मेरा विवाह परदेश में क्यों किया ?"

अकेली भविसयत्त कहा में मनोवैज्ञानिक चरित्र, नाटकीयता, प्रवाह एवं क्षिप्रता तथा हाव-भावों का प्रदर्शन संवादों में सुनियोजित है। किसी-किसी कथा-काव्य में स्थानीय रंगीनी भी देखी जाती है—

"कउण काज थेरी आरडवि, काहे कारणि पलावे करहि।
किसि कारणि दुख धरहि सरीरन, वेगि कहेहि इउ जंपइ वीरन।" (जिन० चउ० २०६)

अंलकार-योजना

अपभ्रंश के कथा-काव्यों में उपमा, सन्देह, भ्रांतिमान, उत्प्रेक्षा, दृष्टान्त, निदर्शना, श्लेष, स्मरण, रूपक, व्यतिरेक, प्रतिवस्तूपमा, उदाहरण, स्वभावोक्ति, विनोक्ति, अर्थान्तरन्यास, अनुमान, काव्यलिंग, परिसंख्या, विभावना, विशेषोक्ति, समासोक्ति, अतिशयोक्ति, अप्रस्तुतप्रशंसा, यथासख्य आदि अंलकार दृष्टिगत होते हैं।

कुछ अलंकारों के उदाहरण दृष्टव्य हैं—

"हट्टमग्गु कुलसील णिउतहि सोह ण देइ रहिउ वणिउत्तहिं' (भ०क० विनोक्ति)
'सउतडिय तरलविज्जुल सणेहि नं पलयकालु गज्जिउ घणेहिं। (विला. क. ६,२४)' स्वरूपोत्प्रेक्षा
'दुण्णयणय चक्कासणि सचक्क पणवेवि चक्केसरि णयणिचक्क (जिनदत कथा—**यमक**)
'पाविउ मइं विण्णिवि उसदेसहं कहि वप्प दिण्ण पर एसह।
तेण कहिउ जं कहिउ णिमित्तिय सो मइं तुज्जु विहायउ पुत्तिय" (सि. क. नरसेन) १,४२

चरित्र-चित्रण

चरित्र-चित्रण में अपभ्रंश कथा-काव्यों के लेखकों में धनपाल, लाखू और साधारण सिद्धसेन को जितनी सफलता मिली है, उतनी अन्य किसी कथाकाव्यकार को नहीं। कथाकाव्य के लेखकों ने सामान्य व्यक्ति को नायक बनाकर उसके जीवन के चरम उत्कर्ष की सरणि प्रदर्शित की है। कथा काव्यों में जहां यथार्थ से आदर्श की ओर बढ़ने तथा जीवन के चरम लक्ष्य की प्राप्ति का सन्देश निहित है, वहीं जनसामान्य की मांगलिक भावनाओं की मधुर अभिव्यञ्जना है। सामान्य रूप से इन कथा-काव्यों में जीवन के घोर दुःखों के बीच उन्नति का मार्ग प्रदर्शित है, जिस पर चलकर कोई भी व्यक्ति सुख एवं मुक्ति को प्राप्त कर सकता है।

संवाद-संरचना

अपभ्रंश के कथाकाव्यों में संवाद-संरचना कई रूपों में मिलती है। यदि जिनदत्त-कथा के संवाद अलंकृत हैं और गीति-शैली में कहीं कहीं वर्णित हैं तो भविसयत्तकहा में सरल, स्वाभाविक और सजीव हैं। प्रायः सभी कथाकाव्यों में संवादों की मधुरता और सरसता लक्षित होती है। बड़े और छोटे दोनों प्रकार के संवाद इन कथा-काव्यों में मिलते हैं। सभी कथाकाव्यों में वातावरण तथा दृश्यों के बीच संवादों की योजना हुई है।

छन्द योजना

अपभ्रंश के कथा-काव्यों में मुख्य रूप से मात्रिक छन्द प्रयुक्त है। यद्यपि वैदिक छन्द ताल और संगीत पर आधा-रित है, पर उनमें अक्षर प्रधान हैं। उनका आधार गण, मात्रा और स्वराघात है। और इसीलिए नियत अक्षरों में आकलित होने से उसे 'वृत्त' कहा जाता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है। किन्तु नियत मात्रा वाला पद्य 'जाति' में कहा गया है। आचार्य हेमचन्द्र के मत में छन्द का अर्थ बन्ध और एक अक्षर से लेकर छब्बीस अक्षर तक की जाति की सामान्य संज्ञा 'छन्द' है।

यदि साहित्यिक रचना-शैलियों की दृष्टि से विचार किया जाय तो कई प्राकृत की तथा लोक-प्रचलित गीत एवं संवादमूलक शैलियाँ अपभ्रंश के इन कथा-काव्यों में देखी जा सकती हैं। अपभ्रंश के प्रत्येक कथा-काव्य में कई प्रकार के गीत मिलते हैं जो लोक प्रचलित शैली में लिखे गये जान पड़ते हैं। अतएव इस प्रकार के गीतों में भाव और भाषा की बनावट न होकर लोकगीतों का माधुर्य और प्रवाह लय पर आधारित है। उदाहरण के लिए—

'रसंत कंत सारसं रमंत नीर माणुसं
सु उच्छलंत मच्छयं विसाल नील कच्छयं
विलोल लोल नक्कयं फुरंत चारु चक्कयं
खुडंत पत्त केसरं पलोइयं महासरं' (विला० कहा ५,१५)

संस्कृत के विक्रमोर्वशीय नाटक में अपभ्रंश के प्रसिद्ध चर्चरी गीत का उल्लेख ही नहीं, उदाहरण भी मिलते हैं, जैसे—

'गन्धुम्माइ अमहुअर गीएहिं
वज्जतेहिं परहुतूरेहिं ।
पसरिअ पवण्हुव्वेलिअ पल्लवणिअरु,
सुलालिअ विविह पआरेहिं णच्चइ कप्पअरु।' (४, १२)

ललिताछन्द का एक उदाहरण दृष्टव्य है—

'सिंदूरारुणवण्णो दिणयरु अत्थमियउ,
नहयल रुक्खह नाइ पक्कउ फलु पनियउ।' (विलासवती-कथा)

भाषा

जिनदत्त कथा को छोड़ कर अपभ्रंश के कथाकाव्यों की भाषा सरल तथा शास्त्र और लोक के बीच की मिश्रित भाषा है। प्रयुक्त भाषा में बोलचाल के शब्द, मुहावरे, लोकोक्तियों एवं सूक्तियों के समावेश के साथ ही संस्कृतनिष्ठ अथवा संस्कृत से बने या बिगड़े हुए शब्दों की प्रचुरता है। जिनदत्त कथा में शब्दों की तोड़-मरोड़ अधिक मिलती है लेकिन विकृत शब्दों में संस्कृति से आगत शब्दों का ही बाहुल्य दृष्टिगोचर होता है। उदाहरण के लिए निम्न शब्द देखे जा सकते हैं—

सप्पसूणु (सप्रसून), इच्छाइ (इत्यादि), णिसाडय (चन्द्रमा), अडइ (अटवी), संमतं (संभ्रान्त), इंगिव (इंगित), वत्तु (वस्त्र), कोय (कोक) आदि।

इसके अलावा शब्द-रूप और वाक्य-रचना तथा सर्वनाम-शब्दों पर भी संस्कृत का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

उक्त विवरण से स्पष्ट है कि अपभ्रंश के कथाकाव्यों में जहां एक ओर संस्कृत से प्रभावित भाषा मिलती है, वहीं दूसरी ओर बोलचाल की भी बानगी मिलती है, जिसे देखकर सहज में ही यह निश्चय हो जाता है कि अपभ्रंश समय-समय पर लोक-बोलियों का आंचल पकड़कर विकसित हुई है। अपभ्रंश युग में संस्कृत और प्राकृत साहित्य की बहुमुखी उन्नति होने से यह स्वाभाविक ही था कि अपभ्रंश के कवि संस्कृत के शब्द-रूपों से अपभ्रंश को समृद्ध बनाकर उसका साहित्य संस्कृत-साहित्य के समकक्ष रचते। वस्तुतः अपभ्रंश भाषा में तत्सम शब्दों की अपेक्षा तद्भव और देशज शब्दों का प्राधान्य है।

शैली

अपभ्रंश के कथा काव्य प्रबन्ध काव्यों की भांति सन्धिबद्ध है। कम से कम दो तथा अधिक से अधिक २२ सन्धियों में निबद्ध कथा-काव्य उपलब्ध होते हैं। इनमें सन्धियों की रचना कड़वकों में हुई है। कड़वक के अन्त में घला देने का विधान मिलता है। यद्यपि अपभ्रंश काव्य सन्धियों में कड़वकबद्ध मिलते हैं, किन्तु कड़वकों की रचना में नियत पंक्तियों का परिपालन नहीं देखा जाता है। आचार्य स्वयंभू के अनुसार एक कड़वक में ८ यमक एवं १६ पंक्तियां होनी चाहिए। लेकिन ८ पंक्तियों से लेकर २४ पंक्तियों तक के कड़वक कथा काव्यों में प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार प्रबन्ध काव्य के लिए कड़वकों की संख्या का न तो कोई नियम मिलता है और न विधान ही। किन्तु सामान्यतः एक सन्धि में १० से १४ के बीच कड़वकों की संख्या मिलती है। अपभ्रंश के कथा-काव्यों में कम से कम ११ और अधिक से अधिक ४६ कड़वक प्रयुक्त हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोक-जीवन और संस्कृति

(क) **धार्मिक विश्वास**—अपभ्रंश के सभी कथा-काव्य जैन-कवियों द्वारा रचित हैं। इसलिए यह स्वाभाविक ही है कि इनमें २४ तीर्थंकरों का स्तवन तथा उनके द्वारा निर्दिष्ट धर्म का स्वरूप एवं मोक्ष-प्राप्ति का उपाय वर्णित है। किन्तु मध्यकालीन देवी-देवता विषयक मान्यताओं का उल्लेख भी इन काव्यों में मिलता है। यही नहीं, जल (वरुण) देवता का पूजन, जल देवता का प्रत्यक्ष होना, संकट पड़ने पर देवी-देवताओं द्वारा संकट-निवारण आदि धार्मिक-विश्वास कथाओं में लिपटे हुए परिलक्षित होते हैं।

(ख) **शकुन-अपशकुन**—अपभ्रंश के कथा-काव्यों में शकुन-अपशकुन तथा स्वप्न सम्बन्धी विश्वास लगभग सभी रचनाओं में मिलते हैं। भविसयत्त कथा में जब भविष्यदत्त मेनागद्वीप में अकेला छोड़ दिया जाता है, तब वह वन में भटकता हुआ थककर सो जाता है। दूसरे दिन वह फिर आगे बढ़ता है तभी उसे शुभ शकुन होने लगते हैं (भ० क० ३, ५)।

विलासवइ कथा में भी शकुन का वर्णन है—

"एतहि सारसु खु वित्थरियउ।
इय चिंततहं सुमिण पओयणु-दाहिण वादु फुरिउ तह लोयणु।
सहणु सत्थु अणुकूलउ दीसइ, रन्ने वि कन्नय लाहु पयासइ॥" (५, २४)

(ग) **जाति-सम्बन्धी**—अपभ्रंश की इन कथाओं में जाति-विषयक सामान्य विश्वास भी मिलते हैं। इन विश्वासों में मुख्य हैं—रात को भोजन न करना, देव-दर्शन एवं पूजन के बिना सुबह उठकर भोजन न करना, विविध देव-देवियों की पूजा करना और वृत्त-विधान का पालन करना आदि।

(घ) **सामाजिक आचार-विचार**—अपभ्रंश कथा-काव्यों में सामाजिक आचार-विचारों का जहां-तहां समावेश हुआ है। दोहला होने पर सभी की मनोकामनाएं पूर्ण की जाती थीं। बालक-जन्म का महोत्सव किया जाता था। विवाह का कार्य प्रायः ब्राह्मण लोग करते थे। प्रेम-विवाह भी होते थे। विलासवती का सनत्कुमार के साथ ऐसा ही प्रेम-विवाह हुआ था। विवाह-कार्य प्रमुख सामाजिक उत्सव के रूप में किये जाते थे। जल-विहार, जल-क्रीड़ा, वन-विहार होते थे। राजपूतकालीन प्रभाव भी दृष्टिगोचर होता है। आखेट-क्रीड़ा करना, बलि देना, शूली पर चढ़ाना आदि बातें अपभ्रंश के कथा-काव्यों में नहीं मिलतीं।

अपभ्रंश साहित्य हिन्दी के लिए अमृत की घूंट के समान है। इसका कारण स्पष्ट है। भाषा की दृष्टि से अपभ्रंश साहित्य प्राचीन हिन्दी का एक महत्त्वपूर्ण मोड़ प्रस्तुत करता है। जब प्राकृत भाषा के अति उत्कर्ष के बाद जनता का सम्पर्क जनपदीय संस्कृति से हुआ और उसे साहित्यिक मान्यता प्राप्त हुई, तब अपभ्रंश भाषा साहित्यिक रचना के योग्य कर ली गई। अपभ्रंश एवं अवहट्ट भाषा ने जो अद्भुत विस्तार प्राप्त किया उसकी कुछ कल्पना जैन भंडारों में सुरक्षित साहित्य से होती है। अपभ्रंश भाषा के कुछ ही ग्रन्थ मुद्रित होकर प्रकाश में आये हैं। और भी सैकड़ों ग्रन्थ अभी तक भंडारों में सुरक्षित हैं एवं हिन्दी के विद्वानों द्वारा प्रकाश में आने की बाट देख रहे हैं। अपभ्रंश साहित्य ने हिन्दी के न केवल भाषा रूप साहित्य को समृद्ध बनाया, अपितु उनके काव्यरूपों तथा कथानकों को भी पुष्पित एवं पल्लवित किया। इन तत्त्वों का सम्यक् अध्यापन अभी तक नहीं हुआ है, जो हिन्दी के सयोगपूर्ण साहित्य के लिए आवश्यक है क्योंकि प्राचीन हिन्दी सहस्रों शब्दों की व्युत्पत्ति और अर्थ अपभ्रंश भाषा में सुरक्षित है। इसी के साथ-साथ अपभ्रंश कालीन समस्त साहित्य का एक विशद इतिहास लिखे जाने की आवश्यकता अभी बनी हुई है।

(डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल : पं० परमानन्द जैन शास्त्री की पुस्तक जैन-ग्रंथ-प्रशस्ति-संग्रह के प्राक्कथन के अंशों से संकलित।)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org